वर्ष-१४ अंक-८
२७ अप्रैल २०१८

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल 32/2018-20
एक प्रति- २०.०० रु.

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है ..

वैदिक रवि

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रमुख पत्र

एक दृष्टि में आर्य समाज

- आर्य समाज की मान्यता का आधार सत्य सनातन वैदिक धर्म है।
- सनातन वह है जो सदा से था, सदा रहेगा। सत्य सनातन धर्म का आधार वेद है।
- वेद ज्ञान का मूल परमात्मा है।
- यही सृष्टि के प्रारंभ का सबसे पहला ज्ञान, पहली संस्कृति और समस्त सत्य विद्याओं से पूर्ण है।
- वेद ज्ञान किसी जाति, वर्ण, सम्प्रदाय या किसी महापुरुष के ज्ञान के अनुसार नहीं है और न ही किसी समय व स्थान की सीमा में बन्धा है।
- परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद समस्त प्राणियों के लिए और सदा के लिए हैं।
- इसे पढ़ना-पढ़ाना श्रेष्ठ (आर्य) जनों का परम धर्म है।
- ईश्वर को सभी मानते हैं इसलिए विश्व शान्ति इसी ईश्वरीय ज्ञान वेद से संभव है।
- आर्य समाज-अविद्या, कुरीतियों, पाखण्ड व जाति प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयों को दूर करने वाला तथा सत्य ज्ञान व सनातन संस्कृति का प्रचारक है।

ओ३म्
वैदिक रवि
मासिक

वर्ष 16 अंक–08

27 अप्रैल 2018
(सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा के निर्णयानुसार)
सृष्टि सम्बत् 1,96,08,53,119
विक्रम संवत् 2075
दयानन्दाब्द 194

सलाहकार मण्डल
राजेन्द्र व्यास
पं. रामलाल शास्त्री 'विद्याभास्कर'
डॉ. रामलाल प्रजापति
वरिष्ठ पत्रकार

प्रधान सम्पादक
श्री इन्द्रप्रकाश गॉधी
कार्या. फोन : 0755 4220549

सम्पादक
प्रकाश आर्य
फोन : 07324 226566

सह सम्पादक
मुकेश कुमार यादव
फोन : 9826183095

सदस्यता
एक प्रति – 20–00 रू.
वार्षिक – 200–00 रू.
आजीवन – 1000–00 रू.

विज्ञापन की दरें

आवरण पृष्ठ 2 एवं 3	500 रू.
पूर्ण पृष्ठ (अन्दर)	400 रू.
आधा पृष्ठ (अन्दर का)	250 रू.
चौथाई पृष्ठ	150 रू.

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
सम्पादकीय	4
महर्षि दयानन्द के अमृत वचन	7
शरीर को निरोग रखने के नियम	8
जिन्दगी जिए कैसे	9
क्या आप जानते हैं	10
मूर्ख के 10 लक्षण है	10
धन्य है ऋषि दयानन्द	11
इन्द्रियों को वश में रखने की विधि	13
पाप से दूर हों	14
कर्मफल सिद्धान्त ईश्वर की व्यवस्था	15
वेदों की सूक्तियां	16
वो सुबह कभी तो आयेगी	17
वेद ही सब सत्य विद्याओं के भण्डार क्यों	18
मनुष्यता की पहचान "परमार्थ"	20
उन्नति के लिये आवश्यक चिन्तन	22
सत्यार्थ प्रकाश क्यों पढ़े	23
वैदिक ज्ञान प्रश्नावली	24
आर्य समाज में गोसपुरा नं.1 के वार्षिक निर्वाचन सम्पन्न	26

मई माह के पर्व त्यौहार एवं जयन्ती

■ श्रमिक दिवस, महाराष्ट्र गुजरात स्थापना दिवस	1
■ प्रेस स्वतंत्रता दिवस	3
■ रविन्द्रनाथ टैगोर जयंती	7
■ विश्व रेडक्रास दिवस	8
■ विश्व दूर संचार दिवस, रानी अहिल्याबाई होल्कर जयंती	17
■ राजीव गांधी पुण्यतिथि	21
■ राजा राममोहन राय जयंती	22
■ महर्षि गावल जी अवतरण दिवस	24
■ पं. जवाहरलाल नेहरू पुण्यतिथि	27
■ वीर सावरकर जयंती	28
■ तम्बाकू निषेध दिवस	31

सम्पादकीय

बदले जमाने में क्या खोया, क्या पाया ?

जमाना बदल गया, बदलता जा रहा है नित नए अनुभव आदमी पा रहा है। वृद्धों में से अधिकांश व्यक्ति कहते सुने जा सकते हैं भाई अब तो पूरा ही जमाना बदल गया है।

बदलाव प्रकिया शाश्वत नियम है, बीज से, पौधा, पौधे से वृक्ष बनकर फिर नष्ट हो जाता है, मानव शिशु से वृद्धावस्था प्राप्त करने के पश्चात देहत्याग देता है। जहां पहाड़ है वहां कभी झील या नदी रही होगी, जहां नदी है वहां कभी ऊँचे-ऊँचे टीले रहे होगें। अनेक शहर आज जमीन के नीचे हैं, पानी के नीचे हैं, अनेक स्थान जो कभी घने जंगल हुआ करते थे वहां आज घनी बस्ती बन चुकी है। ऐसे अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं।

परन्तु ये प्रकृति प्रदत्त हैं जो होते ही हैं और होते ही रहेगें। यह सब जीवन में सामान्य घटनाक्रम के रूप में हम देखते हैं इस पर बहुत अधिक न तो हम सोचते हैं, न इसका हम पर कोई विशेष प्रभाव होता है। क्योंकि दिन-रात, जीवन-मृत्यु, सर्दी, गर्मी, बारिश यह क्रम ऋतुओं के अनुसार शाश्वत है, हमारे नित्य सम्पर्क की घटनाएं हैं।

किन्तु इस बदलाव के अतिरिक्त मानवीय आचार-विचार दिनचर्या में जो बदलाव आया उस बदलाव को देखकर ही कहा जाता है "जमाना बदल गया"। निश्चित रूप से इस बात में सत्यता है, हमारी जीवन शैली परिवर्तित हो गई है और निरन्तर होती जा रही है। परिवर्तन कोई बुरी बात नहीं किन्तु परिवर्तन इस मानव जीवन को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है आज यह विचारणीय एवं चिन्ता का विषय है।

आज मानव समाज खूंखार पशुओं से उतना भयभीत नहीं है जितना अपने ही समाज के सदस्यों से है। संस्कृति व संस्कार का त्याग भाव मनुष्य को अवनति की ओर ले जा रहा है।

संस्कृति रक्षा वहीं होगी जहां संस्कार हों, जहां संस्कार नहीं वहां संस्कृति का सोच भी नहीं हो सकता है और जहां संस्कृति नहीं वहां मानवीय अस्तित्व नहीं।

आज के परिप्रेक्ष्य में चारों ओर नजर दौड़ाए और अपनी संस्कृति की ओर देखें स्पष्ट हो जायेगा, हमारे समाज की पूर्व और वर्तमान स्थिति क्या है ?

मानवता की उंचाईयां का कभी मापदण्ड ज्ञान, चरित्र, सेवाभाव, राष्ट्रभाव आदि माने जाते थे। किन्तु शनैः-शनैः इनका लोप होता गया और आज ये किसी समाज के लिए महत्वपूर्ण बातें नहीं रह गई। आज भौतिकता प्रधान युग है, भौतिकवाद की चकाचौंध से प्रभावित सभ्यता मानवता के समस्त मापदण्ड़ों पर भारी हो चुकी है।

पहले राजा व विद्वान की तुलना में विद्वान को बड़ा बताया जाता था कहा गया **"विद्वतं च नृपितं च नैव तुल्य कदाचनः, स्वदेश पूज्यन्ते राजा, विद्वतं सर्वत्र पूज्यन्ते"** राजा और विद्वान का मान-सम्मान अपने राज्य तक सीमित था और विद्वान

का मान सम्मान सर्वत्र होता था। आज के हालात कहां हैं एक अदना सा अधिकारी या राजनेता समाज में पुजाता है और कहीं कोई मन्त्री हो तो फिर सब उसके सामने बौने ही लगते हैं। आज धनवान व्यक्ति सर्वगुण सम्पन्न माने जाने लगा है। बड़े–बड़े शिक्षाविद्, आचार्य, शास्त्री, साहित्यकारों को इस स्वार्थपूर्ति में लिप्त समाज ने, एक कौने में बैठा दिया, उनकी उपेक्षा कर अनदेखा कर दिया और विद्या के धनी विद्वानों के स्थान पर लक्ष्मीपतियों को सर्वोच्च स्थान पर आसीन कर दिया है। क्योंकि – सामाजिक जीवन में अर्थ का बहुत बड़ा अर्थ है, और सबसे बड़ा अनर्थ भी आज इसी अर्थ के कारण होता है।

गौण हुए आज चरित्र, किसका कैसा है।
बड़ा बना वही, जिसके पास पद पैसा है।।

धनपति को स्थान देना कोई बुरी बात नहीं है, देना ही चाहिए क्योंकि धन भी जीवन की बहुत महत्वपूर्ण आवश्यकता है। किन्तु इसकी चकाचौंध में सबकी उपेक्षा कर इसे ही सर्वोच्चता देना उचित नहीं। धन तो सभी प्रकार के व्यक्तियों के पास पाया जाता है, बुरे से बुरे कार्यों में लिप्त जघन्य अपराधी, स्मगलर, रिश्वतखोर भी बहुत सम्पन्न होते हैं। मात्र सम्पन्नता ही मनुष्य के सम्मान का कारण जहां बन जावे तो समाज में अव्यवस्था होना निश्चित ही है। आज समाज की इस अव्यवस्था का कारण यही नीति है। मनु ने बहुत पहले हमें सचेत किया था।

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानाम तू व्यतिक्रमः।
त्रिणि तत्र प्रवर्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम्।।

जहां अपूज्यों की पूजा और पूजनीयों की उपेक्षा हो वहां अभाव, अकाल मृत्यु और भय का वातावरण निर्मित रहता है। अपनी दृष्टि चारों ओर दौड़ाएं देखें मनु के वाक्य में कितनी अधिक सार्थकता है।

केवल अर्थ से सबसे बड़ा अनर्थ है। ज्ञान का उपहास हमें अन्धकार की ओर ले जा रहा है तभी तो इस सर्वोत्तम योनि को पाकर भी केवल भोग योनी (जो पशुओं) की तरह जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

सुख के साधनों का प्रलोभन भोगों की निरन्तर बढ़ती इच्छा शक्ति ने मानव जीवन के पथ से मनुष्य को मोड़ दिया है। धन, वैभव, सम्पत्ति की चाह से जीवन उद्‌देश्य इसी के आसपास सिमिटा दिया। रिश्ते नकली कागजी फूलों की तरह मात्र देखने, दिखाने तक सीमित हो गए। अपने से हटकर कुछ सोचने की न तो अब आवश्यकता समझी जाती है न किसी के पास समय है। आवश्यकताओं के जाल में उलझा आदमी उससे बाहर नहीं निकल पाता है। इस प्रवृत्ति के सामाजिक संगठन की, और आपसी सहयोग की भावना को रौन्द डाला, **स्वार्थ, स्वार्थ, स्वार्थ** जीवन का पहाड़ा बन गया, जिसने इसे समझ लिया, अपना लिया, वह संसार की निगाह में समझदार और जिसने इसे महत्व नहीं दिया उसे न समझ की उपमा दी जाती है।

साधन, सम्पन्नता, भौतिकता की दौड़ में मनुष्यता के सारे मापदण्ड बहुत पीछे रह गए, जिन्हें हम स्वर्ण अतीत कहते थे वह अव किताबों तक सीमित रह गया। उस छूटी हुई दकियानूसी विचारधारा की ओर न तो देखना चाहते हैं न देखने का समय है क्योंकि उधर ध्यान गया तो आगे लक्ष्य की ओर बढ़ने में शायद पिछड़े

जावे। हमारी स्थिति एक नादान बच्चे जैसी है जिसके सामने एक टाफी, बिस्किट या छोटा सा खिलौना हो और दूसरे हाथ में एक हजार का नोट। तो वह नोट फेंक कर चॉकलेट, टाफी रखना पसंद करेगा। इसी प्रकार हम कुछ थोड़े से सुख के लिए, आनन्द को अपने से दूर कर रहे हैं जीने के सही तरीके से विमुख हो रहे हैं।

भौतिक प्रधानता के साथ पाश्चात्य सभ्यता का बढ़ता प्रभाव हमारे संस्कारों की जड़ों में मट्ठा डाल रहा है। मॉ संसार का सबसे प्रिय आत्मीय और शान्ति प्रदान करने वाला ममता, वात्सल्य, भावना और अभाव, प्रेम से भरा संबोधन है, उसका स्थान मम्मी–मम ने ले लिया। उसी प्रकार काका, चाचा, मामा का स्थान अंकल, मौसी, भुआ, काकी, मामी का स्थान आन्टी जैसे संबोधनों ने लेकर रिश्तों की गरिमा को बौना कर दिया।

गरिमापूर्ण, नम्रता से पूंर्ण अभिवादन चरण स्पर्श, नमस्ते का स्थान हाय हलो, गुडबॉय, सी. यू. ने। खान–पान पहनावे में भी सब वह समा रहा है जो विदेशी संस्कृति के द्वारा मान्य किया गया है।

हमारे स्वर्णिम सिद्धान्त :

"धन खोया तो, कुछ नहीं खोया,
स्वास्थ्य खोया तो कुछ खोया,
चरित्र खोया तो सबकुछ खोया।

आज इसके ठीक विपरीत स्थिति समाज में मान्य होती जा रही है। इसी का परिणाम है सामाजिक कलंक, भ्रष्टाचार, व्यभिचार, शोषण, घूस सामान्य सी बात बनकर रह गया।

कुल मिलाकर जीवन का जोड़–घटाव किया जावे, हिसाब किया जावे तो पायेगें –

हमें आदमी भले ही कहो, पर आदमियत से दूर हैं,
छोड़ चुके वो सब, जिनसे कौम मशहूर है।
आज वक्त बदल गया, आदमी भौतिकता में ढ़ल गया,
यही जीवन की बनी पहचान, इसीलिए जी रहा इन्सान।
खो रहे अतीत गौरव, संस्कार, संस्कृति से हुये दूर,,
लुटा दिए अनमोल रतन, खोटे सिक्कों से है भरपूर।

समाज जिन आदर्शों को लेकर बना, जिनसे जीवन की सार्थकता थी, जो जीने की सही पद्धति थी उन्हें हमने खो दिया और बाहरी शरीर को सजाने, भौतिक सुख के साधन जुटाने में जीवन लगा दिया। जिससे क्षणिक सुख, आत्म संतुष्टि तो मिल जावेगी किन्तु अन्त में पश्चाताप और ग्लानि ही रहेगी। तब पिश्चाताप होगा – "क्या खोया, क्या पाया ?"

इसीलिए प्रदीप जी की पंक्तियॉ बड़ी सही हैं –

देख तेरे इन्सान की हालत क्या हो गई भगवान,
कितना बदल गया इन्सान.....।

महर्षि दयानन्द के अमृत वचन –

0 कोई कितना ही करे, जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत–मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता–पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है।

– सत्यार्थ प्रकाश, अष्टमसमुल्लास

0 जो पूर्ण विद्वान, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छल–कपटरहित, नित्य भ्रमण करने वाले मनुष्य होते हैं, उनको **"अतिथि"** कहते हैं।

0 जब मनुष्य धार्मिक होता है तब उसका विश्वास और मान्य, शत्रु भी करते हैं और जब अधर्मी होता है तब उसका विश्वास और मान्य मित्र भी नहीं करते।

– व्यवहारभानुः

0 परस्पर मिलते समय सत्कार करना हो तब **"नमस्ते"** इस वाक्य का उच्चारण करके छोटे, बड़ों, बड़े छोटों, नींच उत्तमों, उत्तम नींचों और क्षत्रियादि ब्राह्मणों वा ब्रह्मादि क्षत्रियों का निरन्तर सत्कार करें। **– यजु. 16/32**

0 जितने विद्याभ्यास, सुविचार, ईश्वरोपासना, धर्मानुष्ठान सत्य का संग, ब्रह्मचर्य, जितेन्द्रियतादि उत्तम कर्म हैं, वे सब तीर्थ कहाते हैं, क्योंकि इनके द्वारा जीव दुःख सागर से तर सकते हैं। **– आर्योद्‌देश्यरत्नमाला**

0 पत्थर में पत्थर, रोटी में रोटी की भावना करना यथार्थ ज्ञान कहाता है, अर्थात् जैसे को वैसा जानना **"भावना"** है। रोटी में पत्थर और पत्थर में रोटी की भावना करना मिथ्या ज्ञान, अन्य में अन्य बुद्धि, भ्रमरूप **"अभावना"** कहाती है।

– वेदविरूद्धमतखण्डन

0 ब्रह्माण्ड में जितने उत्तम पदार्थ हैं, उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है, सो सुख विद्या–प्राप्ति होने के सुख के हजारवें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सकता।

– ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोत्पत्तिविषयः

शरीर को निरोग रखने के नियम

शरीर को निरोग एवं स्वस्थ रखने के लिए नीचे लिखे नियमों का पालन कीजिये :–

1. प्रातःकाल शीघ्र 5 बजे तक उठ जाने की आदत डालो। रात को दस बजे के भीतर ही सो जाओ।

2. सवेरे उठकर 5–10 मिनिट परमपिता परमात्मा से प्रेम वा श्रद्धा से प्रार्थना करो और अपने मन में पवित्र विचारों की धारा प्रवाहित करो। यह सोचो कि मेरे शरीर में कोई रोग नहीं। मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ।

3. फिर थोड़ा पानी पीकर टहलकर शौच जाओ। मुख वा सिर को वस्त्र से ढंककर पूर्व दिशा की ओर शौच करना चाहिए, जिससे दुर्गन्ध को वायु उड़ा ले जाए।

4. शौच के बाद मिट्टी से हाथ धोकर दातुन करो। दॉत अच्छी तरह साफ करने चाहिऍ।

5. फिर ऋतु के अनुसार मालिश करके स्नान करो। स्नान करते समय सबसे पहले ठण्डा जल सिर पर डालो। गर्म जल से नहाते समय सिर पर गर्म पानी अधिक मत गिराओ, क्योंकि इससे नजर कमजोर हो जाती है।

6. स्नान रोज करो। इससे शरीर में चुस्ती आती है।

7. प्रातः खुली हवा में व्यायाम करो। इससे श्वास रोग नहीं होने पाता। रक्त साफ होता है और मन वश में होता है।

8. मस्तिष्क ठण्डा और पैर सदा गर्म रखने चाहिए।

9. स्नान करके अपनी शक्ति के अनुसार व्यायाम करो। व्यायाम खुली तथा साफ–सुथरी जगह में करना चाहिए।

10. प्रतिदिन प्रातःकाल थोड़ी सैर अवश्य करो क्योंकि उस समय वायु मंडल में ओषजन अधिक होने से रोग दूर होते हैं और सेहत बढ़ती है। सवेरे की सैर सचमुच अमृत है।

11. फिर कुछ पढ़कर भोजन करो। भोजन का प्रत्येक ग्रास चबा–चबाकर खाओ, जिससे वह भली प्रकार पच जाए।

12. भोजन के बाद गीले हाथ ऑखों पर फेरने से नजर तेज होती है।

13. छींक, जॅभाई, शौच व मूत्र कभी नहीं रोकना चाहिए। ऐसा करना स्वास्थ के लिए बड़ा हानिकारक है।

14. शरीर व मस्तिष्क के परिश्रम के बाद गर्म दूध का सेवन करो। बहुत भला होगा।

जिन्दगी जिए कैसे ?

जिन्दगी जीना एक कला है।
जो न समझे उसके लिए बला है।।

जिन्दगी खुशी, सम्मान, स्वर्ग की अनुभूति देती है।
संभलकर न चले तो, जीना मुश्किल भी करती है।।

कोई इसे पाकर अपने को धन्य महसूस करता है।
तो कोई जिन्दगी को, अभिशाप समझ कोसता है।।

यहां सबकुछ उपलब्ध होने पर भी, जो नहीं पाता।
समय गुजरने पर, वो फिर बार–बार पछताता।।

क्योंकि जिन्दगी है ही पानी जैसी।
जो रंग मिला दो, फिर दिखती वैसी।।

हार से हारकर जो बैठ गए, वो क्या कभी हार को हरा पाएंगे ?
गिरने के डर से डर गए जो, क्या वे कभी चल पायेगें ?

किसी भी नाकामी में, अपनी कमी को देखो।
फिर से कोशिश कर नाकामी को आने से रोको।।

इसलिए, जिन्दगी ज़ीने का एक दस्तूर है।
इसे जानो, मानो, फिर मंजिल नहीं दूर है।।

इसे काटना नहीं, सजाना आना चाहिए।
निराश के नहीं, उत्साह गीत गाना चाहिए।।

ये तो अनमोल वरदान है, कई जन्मों की कमाई है।
न समझे इसका मोल तो, जिन्दगी यूं ही गंवाई है।।

इसलिए हर पल, हर क्षण, उत्साह, उमंग में बीते।
चलते हैं जो इस राह पर, वे ही सही जिन्दगी जीते।।

– प्रकाश आर्य, महू

क्या आप जानते हैं ?

1. पृथ्वी का अब तक का सबसे बड़ा प्राणी व्हेल है।
2. फैंक लेनटिनी एक ऐसा अद्‌भुत मानव था जिसकी तीन टांगें थी।
3. अमृतसर के स्वर्ग मन्दिर का असली नाम हरिमन्दिर साहब है।
4. स्वर्ग मन्दिर की स्थापना अमृतसर में सिखों के चौथे गुरू गुरू रामदास ने की थी।
5. जैनों के 23 वें तीर्थकर का नाम श्री पार्श्वनाथ है।
6. सबसे तेज बढ़ने वाला पौधा बांस है।
7. अंतरिक्ष युग की शुरूआत 4 अक्टूबर 1957 को हुई थी "स्पुतनिक" नामक प्रथम उपग्रह को रूस द्वारा पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया गया था।
8. विश्व के सबसे बड़े केकड़े का नाम क्लाज है। इसका वजन 9 किलो व उम्र 60 वर्ष है।
9. दुनिया के सबसे विशाल सांप का नाम अनाकोण्डा है।
10. बौद्ध धर्म के पवित्र धर्मग्रंथ का नाम त्रिपिटक है।

मूर्ख के 10 लक्षण है

1. अधिक बोलना अपने को अधिक काबिल समझना।
2. अपनी बड़ाई खुद करना तथा दूसरे से अपनी बढ़ाई सुनने की चेष्टा करना।
3. किसी बात को पर, लेकिन, किन्तु, परन्तु लगाकर बढ़ाना।
4. उद्‌देश्यहीन कार्य के पीछे अपने को उलझाए रखना।
5. आमदनी से ज्यादा खर्च करना।
6. दूसरों को पैसे उधार देना और लेने की चिन्ता नहीं करना।
7. अपनी चिन्ता को छोड़कर दूसरों की चिन्ता करना।
8. दूसरों का मजाक उड़ाना।
9. बड़ों का अनादर करना।
10. अपरिचित जन से पल में रिश्ता एवं विश्वास करना।

धन्य है ऋषि दयानन्द

संसार में मानव ईश्वर की सर्वोत्तम कृति है। ईश्वर ने मानव को इस धरती पर वे तमाम कार्य करने के लिए भेजा है, जिन्हें करके मानवता धन्य होती है। संसार में जितने भी महापुरूष हुए हैं, उन्होंने मानव मात्र के कल्याण के कार्य किए हैं और मानव कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है। किसी ने अधर्म और अन्याय का मार्ग प्रशस्त किया है। किसने ने अधर्म और अन्याय के विरूद्ध धर्म का मार्ग प्रशस्त किया, किसी ने अधर्म के प्रति धर्म युद्ध के महत्व को बताया। किसी ने जीव मात्र के प्रति दया भाव को जीवन का मार्ग बताया, किसी ने वैराग्य को मोक्ष का मार्ग बताया। किसी ने दीन दुखियों, असहायों की सेवा को मानव कल्याण की राह बताई, किसी ने सत्य, अहिन्सा को परमोधर्म बताया। किसी ने एक ओंकार का जाप बताया।

इस प्रकार सभी महापुरूषों ने अपने–अपने द्वारा बनाए र्मार्ग पर चलकर अपने–अपने पंथ व सम्प्रदाय का निर्माण किया। किन्तु गीता में योगेश्वर श्रीकृष्ण ने कहा हे मानव तू उस परमपिता की शरण में जा, जो तेरे उद्धार का मार्ग है। इससे स्पष्ट है कि संसार का उत्पत्ति कर्ता व सृष्टि का रचयिता एक ब्रह्म अर्थात एक ईश्वर है, वही ओ3म् नाम से भी जाना जाता है।

आज संसार में इतने मत मतान्तर हैं कि व्यक्ति इन मत मतान्तरों के झमेले में पड़कर ईश्वर को कहाँ, कैसे मानें इस असमंजस्य में उलझकर रह गया है। किसी ने कहा ऐसा है तो उस मजार पर जाकर मत्था टेकना फायदा होगा। किसी को कोई परेशानी तो कहा 5 मंगलवार उपवास करना, किसी ने हनुमानजी को चोला चढ़ाना, किसी ने भेरूजी को चोला व प्रसाद चढ़ाने की बात बताई तो किसी ने माताजी के नाम से 16 शुक्रवार उपवास की बात बताकर मानव को अनेक वर्षों से दिग्भ्रमित कर रखा है। किसी ने कर्म के स्थान पर मात्र भाग्य को ही महत्व दिया। स्वभाव ही ऐसा बन गया कि उसने बिना परिश्रम, बिना सोचे–विचा के कार्य करना प्रारंभ कर दिया। फांयदा हो गया तो उस देवता की जय–जयकार वरना क्या करें भाग्य में ही ऐसा था मानकर बैठ जाना।

हम भाग्यशाली हैं कि 19 वीं सदी में भारत की इस धरती पर दयानन्द सरस्वती का जन्म हुआ, जिसने बचपन से ही यह एहसास किया कि सच्चा शिव मूर्ति में नहीं है, वह तो कहीं ओर है और फिर भारत भ्रमण करके सच्चे गुरू से शिक्षा दीक्षा लेकर उस परमपिता परमात्मा के बारे में बताया, वह कैसा है। कहाँ रहता है, परमात्मा हमारी कैसे मदद करता है, परमात्मा ही हमारा पालक है, रक्षक है, वही हमारा पिता है, उसका प्यारा नाम ओ3म् है। वेदों के अध्ययन एवं विश्व की

3500 पुस्तकों व धर्मग्रंथों का गहन अध्ययन करके ऋषि दयानन्द सरस्वती ने सत्याथ प्रकाश की रचना करके मानव के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया है। सत्यार्थ प्रकाश संसार का एकमात्र ऐसा ग्रंथ है, जिसके अध्ययन से मनुष्य के सभी संशय समाप्त हो जाते हैं, भटके हुए को मार्ग, भाग्यवादी को कर्म की प्रधानता व ईश्वर कहॉ रहता है, ईश्वर को क्या पसन्द है। हमें वे तमाम वस्तुएं ईश्वर ने प्रदत्त की हैं, वह हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग पर लगाता है। यदि हम उस परमात्मा को सच्चे हृदय से याद करते हैं तो वह हमारा मार्ग प्रशस्त करता है। ऋषि ने वेदों की ओर लौटने और सत्य सनातन वैदिक धर्म का पालन करने से ही मानव का कल्याण संभव है, यही उसे ईश्वर के निकट लाता है। ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने में वेद पूर्ण रूप से सहायक है। स्वामीजी ने लोगों का आव्हान किया कि वेदों की ओर लौटें। वेद ही मानव संस्कृति व सभ्यता के जनक हैं, वेद ही कल्याण का मार्ग हैं वेद का पढ़ना और पढ़ाना वैदिक ज्ञान सुनना–सुनाना हम सबका कर्तव्य बताया। देव दयानन्द ने जो कुछ भी ज्ञान स्वरूप लिखा या बताया वह सब वेदानुकूल है, वेदों में जो ज्ञान है, वेदों में जो विज्ञान है, वेदों में जो व्यक्ति, घर–परिवार, समाज व राष्ट्र के लिए प्राणीमात्र के उद्धार के लिए आवश्यक है, उस सबको आपने बताया है। ऋषि ने सबसे पहले नारी उद्धार, नारी शिक्षा, नारी को वेदों का अध्ययन करने की बात कही है। अछूतोद्धार, कर्म एवं यज्ञ आदि के महत्व को प्रतिपादित करते हुए आपने एक ईश्वर के सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हुए उस घट–घटवासी परमात्मा जो हमारे सबके हृदय में भी निवास करता है, उसी परमात्मा की स्तुति करने मात्र से हमारा उद्धार बताया है।

महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन दैदीप्यमान, कांतियुक्त होकर हीरे के समान चमकदार था। सत्य माने तो ऋषि देव दयानन्द नहीं होते तो यह मानव समाज न जाने कितने वर्षों तक और भटकता रहता, अन्याय–अत्याचार व पाखण्ड़ के झमेले में उलझा रहता, उलझा रहता है।

धन्य है ऋषि स्वामी दयानन्द तुमने मानव जाति को लुटने से बचा लिया। मानव मात्र को कल्याण का मार्ग दिखा दिया आपके द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर मानव मनुष्य बन जाता है। सत्यार्थ प्रकाश अमर रहे, ऋषि देव दयानन्द अमर रहें, उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज की स्थापना गुड़ी पड़वा (नवसंवत्सर) के दिन की गई थी। आज विश्व के 35 से अधिक देशों में हजारों आर्य समाज के करोड़ों लोग मानव मात्र, जीवमात्र के उद्धार का कार्य कर रहे हैं।

– आर्य डॉ. रामलाल प्रजापति

सम्पादक : साप्ता. समाजवादी दृष्टि

एवं वरिष्ठ पत्रकार, महू

बोधकथा –

इन्द्रियों को वश में रखने की विधि

स्वामी रामतीर्थ जब प्रोफेसर तीर्थराम थे, तब लाहौर के एक कॉलेज में पढ़ाते थे। वह रहते थे लुहारी दरवाज़ा में। कॉलेज से घर को आ रहे थे, तो लुहारी दरवाजे में उन्होंने एक व्यक्ति को टोकरी में रखकर नींबू बेचते हुए देखा। पीले रंग के रसभरे नींबू थे। मुख में पानी आ गया। जिव्हा ने कहा – क्रय कर लो, उनका स्वाद बहुत उत्तम है।

तीर्थराम थोड़ी देर रूके। फिर आगे बढ़ गये। आगे जाकर जिव्हा फिर मचली, उसने कहा – नींबू अच्छे तो थे, नींबू खाने में हानि क्या है ?

तीर्थराम उल्टे आये। नींबुओं को देखा। वास्तव में बहुत उत्तम थे। उन्हें देखकर फिर घर की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर गये तो जिव्हा फिर चिल्ला उठी – नींबू का रस तो बहुत अच्छा है। नींबू तो खाने की चीज है। उसे खाने में पाप क्या है ?

तीर्थराम पुनः नींबूवाले के पास आ गये। दो नींबू मोल ले लिये। घर पहुंचे। देवी से कहा – चाकू लाओ। उसने चाकू लाकर रख दिया। तीर्थराम चाकू को नींबू के पास और दोनों को अपने समक्ष रखकर बैठ गये। बैठे रहे, देखते रहे। अन्दर से आवाज आई, इन्हें काटो, काटने में क्या हानि है ?

रामतीर्थ ने चाकू उठाया और एक नींबू को काट दिया। मुख में पानी भर आया। अन्दर से फिर प्रेरणा हुई, इसे चखकर तो देखो, इसका रस बहुत उत्तम है।

रामतीर्थ ने एक टुकड़े को उठा लिया, जिव्हा के समीप ले गये। नींबू को उसके साथ लगने नहीं दिया। अन्दर से किसी ने पुकारकर कहा – तू क्या इस जिव्हा का दास है ? जो यह जिव्हा कहेगी, वही करेगा ? जिव्हा तेरी है, तू जिव्हा का नहीं।

समीप खड़ी पत्नि ने कहा – यह क्या करते हो ? नींबू को लाये, इसे काटा, अब खाते क्यों नहीं ?

जिव्हा ने कहा – शीघ्रता करो। नींबू का स्वाद बहुत उत्तम है। रामतीर्थ शीघ्रता से उठे। कटे और बिना कटे हुए दोनों नींबुओं को उठाकर गली में फैंक दिया और प्रसन्नता से नाच बैठे – मैं जीत गया।

यह है इन्द्रियों को वश में करने की विधि।

वेद वाणी

पाप से दूर हों

ओ3म् परोपे हि मनस्पाप किसशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि संचर गृहेषु गोषु में मनः।।

– अथर्ववेद

हे (मनस्पाप) मन के पाप तू (परा उप एहि) दूर भाग जा हे पापी मन। (किम्) क्यो (अषस्तानि) निन्दित बातों को (षंससि) सोचता है। (परेहि) हट जा। हे मन के पाप (त्वा) तुझको (न कामये) मै नहीं चाहता। (वृक्षान्+वनानि) वृक्षों और वनों में अर्थात निर्जन स्थानों में (संचर) विचरो (में) मेरा (मनः) मन तो (गृहेषु) मेरे शरीर रूप घर की सफाई में विकारों से दूर करने में (गोषु) इन्द्रियों को सही दिषा की ओर उन्मुख करने में तथा वेद पठन पाठन में गौ संरक्षक व गौ संवर्द्धन में लगा है।

भावार्थ – मन मानव जीवन का आधार है, योमीराज श्रीकृष्ण कहते हैं – **"मन एव मनुस्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो"** मन ही मनुष्य के बन्धन का कारण है, मन ही मनुष्य के लिए मोक्ष का कारण है। मन का कपि बन्दर कहा गया है बहुत उछल कूद मचाता है मन के संकल्प विकल्प होते रहते है – इसमें उलझकर मनुष्य आकुल व्याकुल हो जाता है मन के विकार काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सर, के वषीभूत होकर मनुष्य शनैः शनैः पतन के गर्त में जाने लगता है मन एक सीढी है जिससे ऊपर भी जा सकते है और उपर से नीचे भी आ सकते है। किन्तु साधना में रत साधक मन के पापों को कठोर शब्दों में कहता है।

मेरा तुझसे अब कोई सम्बन्ध नहीं है मैं तुझे नहीं चाहता। मैं अब समझ गया हूं – ये मन के विकार नरक के पथ है। मै तो अब दृढ संकल्प के साथ प्रभू का स्मरण करते हुए संयम विवेक की पतवारों से जीवन नौका खे रहा हूँ – योगासन प्राणायमादि से जीवन को प्रेय मार्ग से श्रेय मार्ग की ओर ले जा रहा हूँ। मै तो अपने शरीर की अर्न्तमन की सफाई में लगा हुआ हूँ। मै गौ अर्थात इन्द्रियों को सात्वीक और बलषाली बना रहा हूँ – वेदवाणी का जीवन में पठन पाठन और उसे जीवन में उतार रहा हूँ। गौ सर्वर्द्धन और गौ संरक्षण में जीवन आर्पित किए हुए हूँ। मन से बुरे विचारों को दूर कर रहा हूँ। हे मन के पाप भाग जा दूर हो जा। इस प्रकार की दृढ़ता आने से मन के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति हो और बन्धनों से मुक्ति हो सकती है।

श्री राजेन्द्र व्यास
उज्जैन

कर्मफल सिद्धान्त
ईश्वर की व्यवस्था

प्रसिद्ध विद्वान
दिवं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

प्रश्न – जब समस्त सृष्टि ईश्वर की व्यवस्था के आधीन है और हम सब भी सृष्टि के अंग हैं तो सत्यासत्य कर्तव्याकर्तव्य, कर्म और भोग की विवेचना की उलझनों में क्यों पड़ना ? होगा तो वही जो ईश्वर की व्यवस्था के भीतर है।

उत्तर – ईश्वर की व्यवस्था जड़ और चेतन के लिए एक सी नहीं है, सृष्टि की जटिलतम समस्या यह है कि जड़ और चेतन में भेद किया जाये। ईश्वर की व्यवस्था जहां जड़ चीजों पर पूरा आधिपत्य रखती है वहां चेतन चीजों को अपने कर्म क्षेत्र में पूरी पूरी स्वतन्त्रता भी है। सृष्टि के निर्माण में चेतन शक्तियों का चेतन शक्तियों का पूरा–पूरा साझा है। नैसर्गिक शक्तियों का चेतन शक्तियां निर्वचन पूर्वक–प्रयोग किया करती हैं। चीटियों के चींटोहर, बया के घोंसले, भेड़ियों की मांदें और सहस्त्रों अन्य जीवों की बनाई हुई चीजें, यही बताती हैं कि चेतन जीव ईश्वर नियन्त्रित नियमों का निरन्तर विवेचनापूर्ण उपयोग किया करते हैं और सृष्टि में परिवर्तन किया करते हैं। सभ्य जातियों के नगर, सड़कें आदि इस बात की सूचना देते हैं कि जिस सृष्टि में हम रहते हैं वह केवल ईश्वर निर्मित ही नहीं हैं उसमें मनुष्य तथा अन्य प्राणियों का भी साझा है। बया जो घोसला बनाती है उसमें घोंसला निर्माण की कला चाहे कितनी ही स्वाभाविक और स्वतन्त्रता शून्य अथवा शिक्षानपेक्षित क्यों न हो उसकी सामग्री के जुटाने आदि में पक्षी को पर्याप्त निर्वाचन करना पड़ता है। अतः जीव की कर्म करने में स्वतन्त्रता सुरक्षित है। सृष्टि के प्रयोजन ही दो हैं। जीव का भोग और जीव का कर्म। सृष्टि इन दोनों प्रयोजनों के लिये सर्वथा उपयुक्त है। भोग का परिणाम है बौद्धिक विकास। उस विकास का प्रभाव पड़ता है कर्तव्यता के निर्वाचन पर। उससे उत्पन्न होते ही भोग पाता है। भोगों से उसकी बुद्धि का विकास होता है, उसी अनुसार यह निर्वाचन करके कर्तुम्, अकर्तुम् अन्यथा कर्तु की स्वतन्त्रता का प्रयोग करता है, हर कर्म पीछे से भोग उत्पन्न करता है। उस भोग से आगे का विकास होता है। यह चक्र कभी बन्द नहीं होता, हम केवल इस चक्र से घबड़ाने या उस पर विश्वास न करने या उसकी ओर से ऑख मूंद लेने मात्र से इस चक्र से छुटकारा नहीं पा सकते। हॉ इस चक्र को समझकर यदि हम ठीक रीति से अपने कर्तव्यों

का पालन करें तो अवश्य ही हमारी उन्नति हो सकती है। परिस्थितियॉं कितनी ही निश्चित क्यों न हों उस निश्चितता के भीतर भी जीव की स्वतन्त्रता की गुंजाइश है। जेल में कैदी पूर्ण रूप से कैदी है फिर भी कैदी को कैद में करने के लिये जो काम दिया जाता है उसके करने में वह अपना विवेक प्रयुक्त कर सकता है। अच्छा करने पर अधिकारी सन्तुष्ट रहते हैं। अन्यथा उनकी अप्रसन्नता होती है और कभी–कभी दण्ड भी प्राप्त होता है। अतः सिद्ध है कि जेल का कैदी भी कर्म करने में स्वतन्त्र और भोग में परतन्त्र है। स्वतन्त्र और परतन्त्र की सीमाएं अवश्य भिन्न हैं और होनी भी चाहिये क्योंकि यह भी तो कर्मों का फल है। श्रेष्ठ पुरूषों को लोक में भी निकृष्ट लोगों की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता रहती है। पुलिस चोर पर दृष्टि रखती है साह पर नहीं, ये सब मानवी कार्य नैसर्गिक नियमों का अनुकरण मात्र है।

वेदों की सूक्तियां

1. **तमेव विदित्वाति मृत्यु मेति।** – यजु. 31/18
   उस ब्रह्म को जानने से ही मनुष्य मृत्यु से छूट जाता है।
2. **ऋतस्य पथि वेधा अपायि।** – ऋ. 6/44/8
   सत्य मार्ग में परमात्मा रक्षा करते हैं।
3. **क्षत्रेणात्मानं परिधापयाथः।** – अथ. 12/3/59
   क्षात्रबल से अपनी रक्षा कर।
4. **परे मृत्यो अनुपरेहि।** – यजु. 35/7
   मृत्यु को परे धकेल दो।
5. **अतप्ततनूर्नतदामो अश्नुतो।** – ऋ. 9/83/1
   बिना तपस्या किये हुए उस प्रभु के स्वरूप को जीव नहीं जान सकता।
6. **आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम्।** – अ. 5/30/7
   उन्नत होना और आगे बढ़ना प्रत्येक जीव का मार्ग है।
7. **अयं मे हस्तो भगवान्।** – यजु. 30/11
   यह मेरा हाथ ऐश्वर्यशाली है।
8. **अश्मा भवतु नस्तनू।** – यजु. 29/49
   हमारे शरीर पत्थर के समान हों।

वो सुबह कभी तो आयेगी

आकश में सूरज चमकेगा,
जब धरती मंगल गायेगी।
जब रिमझीम सावन बरसेगा,
खेतों में बहारें आयेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब पंछी डाल पर चहकेगें,
और कोयल गान सुनायेगी,
कलियों पर भंवरे गुजेंगे,
फूलों पर रंगत छायेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब लाल पलास रंगायेगा,
और सरसों पीली फूलेगी।
जब सर्द हवाए गुम होगी
तब ऋतु बसन्त लहरायेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब आतंक की ऑधी बन्द होकर,
खुशहाली प्यार बढ़ायेगी।
कश्मीर की वादी में फिर से,
जब बुलबुल गीत सुनायेगी।
....वो सुबह कभी तो
औषध हिमगिरि पर महकेगा,
निर्मल गंगा मुस्कुरायेगी।
परदेस में भूले मुसाफिर को,
जब याद वतन की आयेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब वेद ऋचाओं की स्वर लहरी
विश्व पटल पर छायेगी
जब विश्व गुरू होगा भारत
मॉ भारती तब हर्षायेगी
....वो सुबह कभी तो

– **राधेश्याम गोयल "श्याम"**
कोदरिया, महू

वेद ही सब सत्य विद्याओं के भण्डार क्यों ?

आइयें विचार करते हैं। आर्य समाज के संस्थापक, मानव समाज के उद्धारक, योगीराज महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने जीवन में वैदिक – अवैदिक लगभग 3500 ग्रन्थों का सूक्ष्म अध्ययन एवं गहन अनुसन्धान करने के पश्चात् यह घोषणा की थी, कि वेद ही सब सत्य विद्याओं के, ज्ञान विज्ञान के भण्डार हैं, निधि,हैं। वेद के अनुकूल चलकर ही मानव का कल्याण संभव है तभी राष्ट्र की उन्नति हो सकती है। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर आर्य समाज द्वारा देश में अनेकों गुरूकुल विद्यालय संचालित किये जा रहे हैं। जिनके माध्यम से बालक बालिकाओं का चरित्र निर्माण, सनातन धर्म एवं संस्कृति की रक्षा की जा रही है।

वर्तमान समय में प्रमाद व भ्रम के कारण एक भूल हो रही है जिसे सुधारना अति आवश्यक है। हमने केवल संस्कृत भाषा को ही सीखने को वैदिक शिक्षा मान लिया है। आज हम संस्कृत भाषा मात्र सीखकर अथवा गीत गाना व बोलना सीखकर ही अपने आपको वेदों का विद्वान घोषित कर देते हैं। अपने नाम से बड़े–बड़े विज्ञापन प्रकाशित करवा कर,स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानकर इसी में सन्तोष कर लेते है, अपने आप को कृत–कृत्य मान लेते हैं। इसी बात को मुण्डकोपनिषद् में बड़े स्पष्ट शब्दों में बताया है।–

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितम्मन्यमानाः।
जड्.घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।।

अर्थ–अविद्या के अन्धकार में पड़े हुए अपने आप को धीर विद्वान पण्डित समझने वाले आलसी पाप प्रवृत्ति के कारण दुःखों के मारे मूर्ख पुरूष, जैसे अन्धे के पीछे अन्धे चलते हैं वैसे भटकते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति जो वेद ज्ञान से शून्य हैं तथा वेद से विपरीत चलकर कुछ भी लाभ नहीं ले पाते।

आर्य जाति के महान दार्शनिक, वेदों के वैज्ञानिक भाष्य कर्त्ता महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं वेदों में अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित, ज्योतिष है इसमें यजुर्वेद का अ0 18, मं0 ,24,25 उद्धृत करते हैं।'' इसे भी हमने वैदिक विधि से पढ़ना पढ़ाना छोड़ दिया है।

वर्तमान में वैदिक ज्योतिष गणित के विद्वान आचार्य दार्शनेय श्री लोकेश जी हैं जो नोएडा से वैदिक पंचाग प्रकाशित करते हैं अद्भुत पंचाग है अवश्य पढ़ें। दूसरे स्वामी ब्रह्मानन्द हैं। वेदों में विमान विद्या है महर्षि भारद्वाज रचित वृहद विमान शास्त्र जिसका कुछ भाग इन्टरनेट पर भी उपलब्ध है राइट ब्रदर्स जिन्हें हम जानकारी न होने के कारण विमान विद्या का जनक मानते हैं, से 8 वर्ष पूर्व आर्य वैदिक वैज्ञानिक श्री शिवकर बापू तलपदे ने वेद विज्ञान के अनुसार सन् 1895 में मुम्बई की चौपटी पर विमान का अविष्कार कर दिखाया था। मरूतसखा नामन यह विमान 1500 फुट की ऊँचाई पर 17 मिनट तक उड़ता रहा था, महाराजा गायकवाड़ इसके साक्षी थे। अंग्रेजों ने छल करके श्री तलपदे जी से विमान का सूत्र (फार्मूला) ले लिया और स्वयं विमान के जनक बन गये। इसे भी इन्टरनेट पर देख सकते हैं। हमें पुनः वेद विज्ञान पर अनुसन्धान की आवश्यकता है। वेदों में

सृष्टि विद्या, ब्रह्म विद्या, तार विद्या, आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र पृथिवी आदि लोक लोकान्तर भ्रमण, आकर्षण, राजनीति आदि अनन्त विद्यायें वेदों में हैं। हमें फिर से गुरूकुलों में अनुसन्धान केन्द्रों की स्थापना करके वैदिक विद्याओं के प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है। वैदिक विद्याओं के सम्बन्ध में "नारद और सनत्कुमार संवाद" के रूप में छान्दोग्य उपनिषद् में आख्यायिका है एक बार नारद जी सनत्कुमार के पास आत्म ज्ञान प्राप्त करने के लिए गये। नारद जी ने सनत्कुमार ने पूछा आपने अब तक जो कुछ पढ़ा है वह सब मुझे बताईये। तब नारद बोले –

सहो वाच ऋग्वेदं भगवो——सर्पदेवजनविद्यामेतद् भगवोऽध्येमि। छा0 7/1/2

अर्थ–"भगवान मैने चारो वेद शल्यक्रिया एवं अंगों के प्रत्यारोपण आदि पुराण (ब्राह्मण ग्रन्थ) पित्र्यविद्या–अर्थात् शुश्रशाविज्ञान (नर्सिंग) अर्थ शास्त्र, ईश्वर प्राप्ति विज्ञान, भूतविद्या–प्राणी शास्त्र (बायोलॉजी) सर्पविद्या (विषेले प्राणियों की विद्या) राशि–गणित, आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान, उत्पात विज्ञान, भूचाल आदि तर्क शास्त्र, नीति शास्त्र, निरूक्त, धनुर्विद्या, नक्षत्र विद्या–ज्योतिष नृत्यगीत वाद्य शास्त्र इन सबको पढ़ा है किन्तु मैं आत्मा को नहीं जानता।"

आज समाज में एक भ्रम फैला है कि अंग्रेजी भाषा पढ़े बिना केवल वेद पढकर अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक नहीं बन सकते। किन्तु ध्यान रहे वेदों को पढ़कर ही समाज सेवी, चरित्रवान, डॉक्टर वैज्ञानिक, इंजीनियरों का निर्माण संभव है। हम भारतीय लोग आज वेदों से दूर भाग रहे हैं और विदेशी भाषा आदि का अनुकरण करके अपने आप को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं। जबकि विश्व में विकसित माने जाने वाले सभी देश विज्ञान पर और संस्कत भाषा पर अनुसन्धान कर रहे हैं। आप इन्टरनेट पर "नासा ऑन संस्कत" डाल कर देख सकते हैं। वैदिक गणित के सूत्र इतने सरल हैं जिनके माध्यम से आसानी से गणित के प्रश्नों को हल किया जा सकता है।

1–उदाहरण के लिए आपके सामने एक सूत्र प्रस्तुत करता हूँ वैदिक गणित का सूत्र है– " **एकाधिकेन पूर्वेण** " पूर्व से एक अधिक के द्वारा अर्थात् कोई भी संख्या जिसका इकाई का अंक पाँच हो पहले अंक से एक अधिक के द्वारा वर्ग ज्ञात करें –

जैसे– 85, 8 दहाई 5 इकाई आठ से एक अधिक नौ, नौ और आठ की गुणा = 72 पाँच गुणा पाँच = 25 =7225 यह पचासी का वर्ग है।

2– उदाहरण – 25, 9 गुणा 10=90, 5 गुणा 5=25 यह पिचानवे का वर्ग है।

इस तरह हम वैदिक विधि से प्रत्येक क्षेत्र में हानि रहित सफलता प्राप्त कर सकते हैं। सभी से निवेदन है कि पूर्वाग्रह और आलस्य त्यागकर वेदों की ओर लौटें। यह वैदिक संस्कति ही सनातन संसकति है। भगवान श्री राम और भगवान श्री कृष्ण, हनुमान, गौतम, कणाद आदि सब इस वैदिक संस्कृति के ही समर्थक थे। **"महाजनोयेन गतः स पन्था"** जिस रास्ते पर हमारे महापुरूष चलें हो हमें भी उसी का अनुसरण करना चाहिए वेद ही सनातन धर्म के मूल हैं। इसी में सबकी उन्नति तथा सबका सुख है यही महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का सन्देश है।

पं. सुरेशचन्द्र शास्त्रो

उपदेशक–म.भा.आ.प्र. सभा भोपाल (म0 प्र0)

मनुष्यता की पहचान "परमार्थ"

परमात्मा ने संसार के प्रत्येक प्राणी को जन्म के साथ ही बुद्धि भी प्रदान की है। किसी भी प्राणी के लिए यह भी नहीं कहा जा सकता कि अमुक प्राणी में बुद्धि नहीं है। सामान्यतः हम यह कह देते हैं कि जानवर है इसमें बुद्धि नहीं है। ऐसा कहने का तात्पर्य मानना कि इसमें अकल है ही नहीं अनुचित है। बुद्धि नहीं होती तो गाय, भैंस, पषु–पक्षी अपना जीवन कैसे जीते ? जीवन जीने के लिए जो परिश्रम व प्रयास मनुष्य करता है वह सब पषु–पक्षी, जलचर भी करते है।

खाना, पीना, सोना, परिवार बढ़ाना, प्रयास करना, भयभित होना, सुख प्राप्ति के प्रयास करना यह सब गुण संसार के प्रत्येक प्राणी में पाये जाते है। चाहे वह मनुष्य हो, चौपाया हो, पक्षी हो या जल में रहने वाले प्राणी जीव–जन्तु हो।

बुद्धि के बिना जीवन की यह सब प्रक्रियाऐं करना असंभव है। जब सभी प्राणियों में बुद्धि है तो फिर इन सबमें ऊचा स्थान मनुष्य को क्यों दिया ? इस पर सोचना जरूरी है। कार्य तो सभी प्राणी करते हैं, परन्तु उनके कार्य करने का ढंग अलग है। कार्य करने की प्रेरणा बुद्धि देती है, बुद्धि की क्षमता और उसका सोच ही कार्य का परिणाम है।

सामान्य बुद्धि भौतिक सुख साधन को प्राप्त करने का निर्देष देती है। विषिष्ट सद्बुद्धि शरीर व भौतिक साधनों से उपर उठकर आगामी जीवन के सम्बन्ध में भी सोचती है। यदि जीवन की स्थिति में शारीरिक या भौतिक सुख सुविधाओं तक ही रह गए तो फिर पषु और मनुष्य का अन्तर नहीं रह जाता है।

पषु–पक्षी अपनी योग्यता व सीमा व उन्हें उपलब्ध साधनों के अनुसार अपना खाना–पीना रहना करते हैं, और मनुष्य भी यही करता है पर उसका स्तर, उसकी क्वालिटी अलग होती है।

पांच सितारा होटल में जाकर आदमी भूख मिटाने के साथ–साथ तरह–तरह के व्यंजनों का स्वाद लेकर किसी बढ़िया जगह बैठने की व्यवस्था वातानुकूलित कक्ष में बैठकर सुख प्राप्त करता है। वहीं पषु–पक्षी अपनी भूख साधारण रूप में जो, जहां, जैसा, उपलब्ध हो गया उस रूप में मिटाते हैं।

पक्षी अपने रहने का घोंसला अपनी अकल व सामर्थ्य के अनुसार बनाकर परिवार के साथ रह लेते हैं। मनुष्य अपने रहने के लिए आलीषान इमारत बनाकर रहता है। पक्षी अपनी यात्रा उड़कर और चलचर पानी में तैरकर करते हैं। मनुष्य इसके लिए पानी का जहाज, स्टीमर, नाव और वायुयान का उपयोग करता है।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि आवष्यकताऐं दोनो की समान हैं, दोनों की आवष्यकताओं की पूर्ति भी हो रही है। इनमें कोई अन्तर यदि है तो केवल साधनो का।

बुद्धि ने ही मनुष्य को सब प्राणियों में सर्वोच्च स्थान दिलवाया हैं। इसीलिए परमात्मा से प्रार्थना करने में सद्बुद्धि की कामना करते है। गायत्री मंत्र को महामंत्र कहते है। इस मंत्र में ईष्वर से भक्त बुद्धि को सत्य मार्ग पर ले जाने की प्रार्थना

करता है। सत्य मार्ग ही धर्म मार्ग है अर्थात जो जैसा हो वैसा ही समझना, मानना, आचरण करना सत्य मार्ग हैं, और यही धर्म हैं।

मनुष्य धर्म का पालन जो करते है वे ही सत्य पथ के अनुगामी है। जिनका आचरण सत्य से मंडित है वे ही मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं, अन्यथा शरीर मनुष्य का पाकर भी जिनका आचरण पषु–पक्षियों जैसा है, वे नकली कागजी फूल के समान है, जो दिखते तो फूल के समान है, परन्तु उनमें सुगन्ध नहीं होती हैं।

मानव की सार्थकता के लिए हमारी कार्यषैली की ओर थोड़ा विचार करना होगा। कर्म को तीन भागों में विभाजित करते हैं:–

पहला है **स्वार्थ** – जो कर्म प्राणी अपने निज लाभ के लिए करता है वह स्वार्थ कहलाता है।

कर्म का यह गुण पषु, पक्षी, जलचर और मनुष्य में समान रूप से पाए जाते है। इसमें किया गया प्रयास अपने तक सीमित रहता है। जीवन रक्षक सभी साधन भी इसी के अन्तर्गत आते है।

दूसरा है **पुरूषार्थ** – जब व्यक्ति अपने साथ ही अपने परिवार के लिए जो कर्म करता है वह पुरूषार्थ कहलाता है।

प्रायः यह कर्म भी सभी प्राणियों में पाए जाते हैं। मनुष्य की तरह पषु भी बाल्याकाल में अपने बच्चों की सुरक्षा उनको खिलाने, पिलाने दूसरों के आक्रमण से बचाने और अपना भोजन कैसे प्राप्त करना यह बताने के लिए पूर्ण प्रयत्न करते हैं। इस लिए कर्म का यह भाग भी सभी प्राणियों की सामान्य प्रकिया हैं।

तीसरा **परमार्थ** – परमार्थ वह कर्म है जिसमें कार्य करने वाला अपने लिए या अपने परिवार के लिए कोई कार्य नहीं करता है। उसके द्वारा किए जाने वाले कर्म में दूसरों को सुख, सुविधा पहुंचाना उसका उद्देष्य रहता है। ऐसा कर्म जिसके करने में निज स्वार्थ का अभाव हो जो पूर्ण रूप से जो दूसरों के हित के लिए भलाई के लिए है, यही परमार्थ कहलाता है।

कर्म का यह स्वरूप पषु–पक्षी या अन्य किसी प्राणी में नहीं पाया जाता है यह केवल मानव का ही गुण हो सकता है। इस गुण को धारण करना ही धर्म है। सन्त तुलसीदास जी की ये पंक्तियां **"परहित सरस धरम नहीं भाई"** परोपकार को धर्म बताती है।

समाज में रहकर समाज के लिए जो सोचते हैं, जिनके मन में परमार्थ की भावना है, परोपकार करके जीवन का जो सुख भोगते हैं, वे ही मनुष्य कहलाने के अधिकारी है। अन्यथा पहला व दूसरा अपने व अपने परिवार के लिए कर्म तो सभी प्राणियों में भी पाया जाता है। इन कर्मों को ही जीवन में महत्व दिया तो अपने को मनुष्य कहलाना एक धोखा है। मनुष्य का अर्थ तो कर्म के तीसरे भाग अर्थात परमार्थ को अपनाने से ही है। परमार्थ भावना से ही परिवार, समाज व राष्ट्र तथा विष्व सुखी रह सकता है। **सर्वे भवन्तु सुखिनः** इसी से संभव है। इसलिए सही अर्थो में मनुष्य जीवन की पहचान यही परमार्थ है।

– प्रकाश आर्य, महू

उन्नति के लिये आवश्यक चिन्तन

आत्मानं खलु उन्नेतुं, चतुर्ध चिन्तनं मतम्।

लक्ष्यः पन्थाश्च शैली च, साधनं कीदृशं मम।। 2।।

भावार्थ – हम मनुष्यों को आवश्यक है कि – व्यक्तिगत उन्नति के लिये, पारिवारिक उन्नत के लिये, सामाजिक उन्नति के लिये या राष्ट्रीय उन्नति के लिये चार बातों पर आवश्यक ध्यान देवें –

(1) लक्ष्य : सर्वप्रथम हमारा लक्ष्य निर्धारित होना चाहिये, हम अपने लक्ष्य के प्रति आश्वस्त, दृढ़ तथा निःशंक होवें, हमारे जीवन में यदि हम मुख्य तथा गौण लक्ष्यों को बनाते हैं, तो हमारे सभी गौण कार्य भी मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होने चाहिये। चलते–फिरते, उठते–बैठते हमें सदा अपने लक्ष्य को स्मरण रखना चाहिये। जैसे – मेरा लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है, मेरा लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है, अथवा मुझे हताश, निराश तथा दुःखी नहीं होना है।

(2) पन्थाः (मार्ग) : हमें अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये उचित मार्ग का चयन करना चाहिये। मार्ग दो प्रकार के होते हैं – (1) श्रेयमार्ग (2) प्रेय मार्ग – हमें चिन्तन, मनन, निदिध्यासन करके निश्चित मार्ग का चयन करना चाहिये। ये दोनों मार्ग एक–दूसरे से विपरीत दिशा में जाने वाले होते हैं, अतः भिन्न–भिन्न लक्ष्यों तक पहेचाते हैं। अनेक व्यक्ति इस प्रकार कहते हैं "मार्ग भिन्न भिन्न हैं किन्तु पहुंचाते एक ही जगह हैं" यह धारणा ठीक नहीं है। प्रथम श्रेयमार्ग, प्रेयमार्ग की अपेक्षा कष्टप्रद, तपस्या से युक्त, थोड़ा विलम्ब से फल देने वाला हो सकता है, किन्तु कालान्तर में अतुलनीय सुख–शान्ति–निर्भयता, उत्साह एवं आनन्द आदि गुणों को देने वाला होता है। जो कि हमें ईश्वरप्रापक तथा मोक्ष प्राप्ति में सहायक होता है।

किन्तु प्रेयमार्ग, श्रेयमार्ग की अपेक्षा भोग विलास के तथा क्षणिक सुख को देनेवाला अधिक साधनों से युक्त होता है। प्रेयमार्ग में क्षणिक अस्थायी सुख प्राप्त होता है, जो कि अन्त में निराशा, हताशा, क्षीणता तथा व्याधियों को जन्म देता है। प्रेयमार्ग के अस्थायी सुख से पूर्ण तृप्ति, पूर्ण आनन्द नहीं मिलता अपितु भोगों को भोगने की इच्छा बढ़ती ही जाती है। प्रेयमार्ग में प्राप्त होने वाले अस्थायी सुख के लिये हिंसा असत्यव्यवहार, द्वेष, द्रोह, चोरी आदि दोषों के होने की संभावना अपेक्षाकृत ज्यादा होती है।

(3) शैली : लक्ष्य प्राप्ति में हमारे कार्यों की शैली (तरीका, रीति) का भी बहुत अधिक महत्व होता है। अनेकों बार देखा जाता है – व्यक्ति श्रेष्ठ लक्ष्य बनाता है, श्रेष्ठ मार्ग का चयन करता है, साधन भी अच्छे होते हैं – किन्तु कार्य करने की शैली ठीक न होने के कारण बार–बार असफल होता ही रहता है – अतः हमें चिन्तन–मनन करके, अपने से अधिक अनुभवी व्यक्ति को पूछकर – ऐसी शैली को अपनाना चाहिये जिसमें – न्यून से न्यून समय, साधन तथा बल का व्यय होकर लक्ष्य प्राप्ति होती हो।

(4) साधन : लक्ष्य प्राप्ति के लिये हमारे पास समुचित मात्रा में अच्छे से अच्छे साधन होने चाहिये।

श्रेयमार्ग में चलने के लिए आवश्यकतानुसार अन्य लौकिक साधन तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिये यम–नियम का पूर्ण पालन, चिन्तन, मनन, निदिध्यासन, स्वाध्याय, साधन, विवेक, वैराग्य, मौन, एकान्त सेवन आदि को प्राप्त करना चाहिये।

प्रेयमार्ग में चलने के लिये – पर्याप्त धन–सम्पत्ति, भवन, यातायात के साधन, भूमि, भृत्य आदि।

हमें उन्नति के लिए उपरोक्त चारों बिन्दुओं पर चिन्तन करना चाहिये।

सत्यार्थ प्रकाश क्यों पढ़े ?

वैचारिक क्रान्ति के लिए।
राजधर्म को जानने के लिए।
आश्रम व्यवस्था को समझने के लिए।
वदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए।
सन्तानों को सुशिक्षित करने के लिए।
भारतीय संस्कृति को समझने के लिए।
धर्म के सत्य स्वरूप को जानने के लिए।
बन्धन और मोक्ष विषय को जानने के लिए।
गृहस्थाश्रम के नियमों को समझने के लिए।
ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानने के लिए।
युवकों में बढ़ती नास्तिकता को रोकने के लिए।
गुणकर्मानुसार वर्णव्यवस्था की स्थापना के लिए।
जगत की उत्पत्ति–स्थिति–प्रलय को समझने के लिए।
विश्व में एक ही मानवधर्म को विस्तृत करने के लिए।
अन्धविश्वास और पाखण्ड़ों को चुनौति देने के लिए।
ईश्वर जीव और प्रकृति के भेद को समझने के लिए।
धार्मिक, आथिक, सामाजिक और राजनैतिक क्रान्ति के लिए।
ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना की उचित विधि को जानने के लिए।
भारतवर्ष तथा देशान्तरों में फैले मत–मतान्तरों में सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए।

साभार – श्री मोहन कृति आर्ष तिथि पत्रक

गतांक से आगे ......

वैदिक ज्ञान प्रश्नावली

प्र.26 ईश्वर कब से है ?

1. अनादि 2. जबसे ब्रह्माण्ड बना

3. जबसे संसार बना 4. जबसे पृथ्वी बनी।

प्र.27 नास्तिक किसको कहते हैं ?

1. जो ईश्वर को न मानें 2. जो मन्दिर न जाये

3. जो धार्मिक पुस्तकें न पढ़े 4. जो माता–पिता का कहना न मानें

प्र.28 कर्मों का फल कब मिलता है ?

1. इसी जन्म में 2. किसी भी जन्म में

3. उसी समय 4. आवश्यक नहीं मिले

प्र.29 तीर्थों पर जाने का क्या लाभ है ?

1. पाप क्षमा हो जाते हैं 2. मुक्ति

3. सैर 4. सन्तों का संग और अच्छे विचार

प्र.30 आनन्द किसमें है ?

1 ईश्वर 2. प्रकृति 3. धन के होने से

प्र.31 ईश्वर ने सृष्टि क्यों बनाई ?

1. अपनी लीला के लिए 2. जीवों के भोग और मोक्ष के लिए

3. सृष्टि ईश्वर ने नहीं बनाई

प्र.32 सृष्टि की रचना कितने तत्वों से हुई ?

1. 3 2. 5 3. 7 4. 8

प्र.33 सृष्टि की रचना किन तत्वों से हुई ?

1. पृथ्वी, जल 2. वायु, अग्नि और 3. आकाश 4. क, ख, ग तीनों

प्र.34 मन की एकाग्रता निर्भर है ?
1. विचारों के संतुलन और चिंतन पर 2. स्वाध्याय पर
3. ईश्वर पूजा पर 4. दूसरों के बताने पर

प्र.35 उपासना के लिए आवश्यक है ?
1. मन की पवित्रता 2. पूजा 3. देवदर्शन 4. तीर्थाटन

प्र.36 उपासना का आशय है ?
1. इच्छापूर्ति की कामना करना 2. ईश्वरीय गुणों को जीवन में उतारने का अभ्यास
3. प्रसाद चढ़ाना 4. कर्मकाण्ड करते रहना

प्र.37 ईश्वर प्रसन्न होता है ?
1. तिलक से 2. घण्टी बजाने से 3. कर्मकाण्ड से 4. सत्कर्मों से

प्र.38 ध्यान के लिए आवश्यक है ?
1. मन की एकाग्रता 2. जीवन की सरलता
3. तनाव मुक्ति 4. क, ख, ग तीनों

प्र.39 गायत्री मन्त्र का जप करने के लिए बन्धन है ?
1. उम्र का 2. महिला हो या पुरूष
3. जाति, धर्म, सम्प्रदाय का 4. कोई नहीं

प्र.40 ईश्वर के गुण हैं ?
1. सर्वव्यापक 2. चेतन 3. अनादि, सर्वान्त्रयामी 4. क,ख,ग तीनों

क्रमशः..................

आकृतिः सत्या मनसो मे अस्तु। अथर्व. 5.3.4

मेरे मन के संकल्प सत्य सिद्ध हों।

एनो मा नि गां कतमच्चनाहम्। अथर्व. 5.3.4

मैं किसी भी पाप में ना फँसूँ।

समाचार –

आर्य समाज गोसपुरा नं. 1 के वार्षिक निर्वाचन सम्पन्न

आर्य समाज गोसपुरा नं. 1 का वार्षिक चुनाव दिनांक 25/2/2018 को श्री गोविन्दसिंह चौहान की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। नवनिर्वाचित कार्यकारिणी में प्रधान श्री मंगलसिंह आर्य, उपप्रधान श्रीमती कमलेश स्वतिका, मन्त्री श्री कृष्णसिंह परिहार, उपमन्त्री श्रीमती भगवती पांचाल, कोषाध्यक्ष श्री अरविन्दसिंह राजपूत, संगठन सचिव श्री शिवराजसिंह तोमर एवं प्रतिनिधि सदस्य के लिए श्री गोविन्द सिंह चौहान, श्री डॉ. नरेन्द्रसिंह जाट चुने गए।

आर्य समाज पिपलानी भोपाल में कार्यक्रम सम्पन्न

आर्य समाज पिपलानी द्वारा अपना 56 वॉ वार्षिकोत्सव वेद प्रचार सम्पन्न हुआ। दिनांक 13 से 15 अप्रेल तक प्रातःकालीन एवं सायंकालीन समय में रात्री देर तक कार्यक्रमों की प्रस्तुति की गई।

कार्यक्रम में श्री आचार्य मुमुक्ष जी, श्री योगेन्द्र याज्ञिक, श्री भानुप्रकाश शास्त्री (बरेली) एवं सभामन्त्री श्री प्रकाश आर्य, श्री वेदप्रकाशजी शर्मा, श्री विकास शास्त्री, विनोद आर्य आदि विद्वान व भजनोपदेशक द्वारा प्रस्तुति दी गई।

कार्यक्रम में प्रातः सायंकाल यज्ञ, भजन, प्रवचन तथा राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, युवा सम्मेलन आयोजित कराए गए।

आर्य समाज महावीर नगर, टी.टी. नगर, जुमेराती से भी बड़ी संख्या में श्रोताओं की उपस्थिति रही। पाण्डाल पूरा भरा रहता था।

अतुल वर्मा

प्रिय पाठकवृन्द,

वैदिक रवि आपका अपना, अपनी सभा का पत्र है। प्रयास किया जा रहा है कि यह अत्यन्त रोचक, ज्ञानवर्धक पत्रिका बनें। हमारी अपनी बात उन लोगों तक भी पहुंचना चाहिए जो वैदिक विचारों से दूर हैं। इसी भावना से पत्रिका का सम्पादन किया जा रहा है जिसे प्रत्येक व्यक्ति पढ़े और इसे पसन्द करे। इसके अधिक से अधिक पाठक हो सकें, इसलिए वैदिक रवि के ग्राहक संख्या बढ़ाने में सहयोगी बनें, अपने परिवार, मित्रों, सगे संबंधियों को इसके ग्राहक बनाइए।

विशेष–बार–बार निवेदन किया जा रहा है कि पत्रिका का और अच्छा स्तर बनें। इस हेतु अपने या स्थापित विद्वानों के लेख, विचार, कविता, समाचार महू के पते पर प्रेषित करें। कृपया इस ओर ध्यान देवें।

प्रांतीय सभा से प्रचार हेतु पुस्तकें व स्टीकर प्राप्त करें

वेद परमात्मा का दिया हुआ सृष्टि का प्रथम पवित्र ज्ञान है, जो पूर्ण है सबके लिए है, सदा के लिए है, वही सनातन और धर्म का आधार है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर को मानने से पहले उसे जानना आवश्यक है. ईश्वर वही है जो-सच्चिदानन्दस्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य,पवित्र और सृष्टिकर्ता है । इसी की उपासना करनी योग्य है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

एक सफल, सुखी, श्रेष्ठ जीवन के लिए मात्र भौतिक सम्पदा धन, सम्पत्ति, मकान ही पर्याप्त नहीं है, आत्मिक सम्पदा, जो आत्मा, मन और बुद्धि की पवित्रता व विकास से प्राप्त होती है, वह भी आवश्यक है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना ▪ पढ़ाना और सुनना▪सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ मानवों) का परम धर्म है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य

...हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थ से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उन्नति तन-मन-धन से सब जने मिल के प्रीति से करें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥

सम्प्रदायों, मजहबों की स्थापना का आधार विभिन्न मानवीय विचार धाराएं हैं, इसलिए वे अनेक हैं। किन्तु धर्म उस एक परमात्मा का ज्ञान हैं, इसलिए सब मनुष्यों का धर्म भी एक है, वही सबको संगठित करता है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर एक है, उसके गुण-कर्म और स्वभाव अनेक है, इसलिए हम उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। किन्तु उसका मुख्य नाम ओ३म् है, उसी का स्मरण करना चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

स्तुति, प्रार्थना, उपासना, पूजा हमारा व्यक्तिगत धर्म है, किन्तु पूर्ण धर्म पालन तो व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्व धर्म के पालन से होता है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।

आर्य समाज

मानव कल्याणार्थ

आर्य समाज के दस नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

AMIT CHATURVEDI # 98262-71062

एम.पी.एच.आई.एन. 2003 12367

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल/32/2015-17

अवितरित रहने पर कृपया निम्न पते पर लौटायें
मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा
तात्या टोपे नगर, भोपाल-462003(म.प्र.)

मुद्रक, प्रकाशक, इन्द्र प्रकाश गांधी द्वारा कौशल प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित कराकर
मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कार्यालय, तात्या टोपे नगर, भोपाल से प्रकाशित। संपादक - प्रकाश आर्य, महू